



प्राचीन संस्कृत साहित्य के ग्रंथों में नारी की स्थिति और वर्तमान समय में उसकी प्रासंगिकता

वंदना शर्मा

शोधार्थी श्री खुशालदास विश्वविद्यालय हनुमानगढ़ राजस्थान

डॉ० निखिल आर्य

सहायक आचार्य संस्कृत विभाग श्री खुशालदास विश्वविद्यालय हनुमानगढ़ राजस्थान

सार

प्राचीन काल में महिलाओं को सम्मान और गरिमा की दृष्टि से देखा जाता था। इस काल में महिला ऋषि हुआ करती थीं और उनका बहुत सम्मान किया जाता था। राजघरानों में महिलाओं को सम्मान दिया जाता था और वे निर्णय लेने और प्रशासनिक कार्यों में भी महत्वपूर्ण योगदान देती थीं। प्राचीन संस्कृत साहित्य ऐतिहासिक समाजों में महिलाओं की भूमिका, अधिकार और एजेंसी का एक जटिल और बहुआयामी चित्रण प्रस्तुत करता है, जो उनके जीवन के सशक्त और प्रतिबंधात्मक दोनों पहलुओं को दर्शाता है। वेद, महाभारत, रामायण और धर्मशास्त्र जैसे ग्रंथ महिलाओं को विविध भूमिकाओं में प्रस्तुत करते हैं – विदुषी, रानियाँ और योद्धा – जो अक्सर उनकी बौद्धिक, आध्यात्मिक और नैतिक शक्ति को दर्शाते हैं, साथ ही उनके कार्यों और स्वायत्तता को नियंत्रित करने वाली पितृसत्तात्मक बाधाओं को भी प्रकट करते हैं।

मुख्यशब्द संस्कृत साहित्य, नारी दृष्टि, स्त्री अधिकार, नारीवादी चिंतन, समानता, गरिमा, स्वायत्तता, प्रासंगिकता

प्रस्तावना

हिंदू संस्कृति में पत्नी को घर की संपत्ति पर पति के बराबर अधिकार था। वह संपत्ति की संयुक्त स्वामीनी होती थी। विवाह के समय पति को यह प्रार्थना करनी पड़ती थी कि वह पत्नी को कभी उसके आर्थिक अधिकारों से वंचित नहीं करेगा। मनु संपत्ति पर नारी के अधिकारों के बारे में खुलकर लिखते हैं। वे स्त्री धन शब्द का प्रयोग करते हुए स्त्रीधन को परिभाषित भी करते हैं। उनके अनुसार स्त्री धन वह धन है जो विवाह के दौरान अग्नि के सम्मुख कन्या को स्नेहवश पितृपक्ष यथा माता पिता या भाई बहन द्वारा पतिगृह जाते समय कन्या को दिया जाता है।

विज्ञानेस्वर ने स्त्री धन को 6 भागों में विभाजित किया है। ये 6 भाग हैं, माता, पिता, भाई और पति द्वारा दिया गया अग्नि की साक्षी, में विवाह के समय कन्यादान के साथ प्राप्त तथा अधिवेदन के निमित्त मिला धन। विवाह के पश्चात् भी उसको जो धन सास-ससुर के माध्यम से प्राप्त होता था उस पर भी उसका पूर्ण अधिकार था। अपरार्क संपत्ति विभाजन के समय भी स्त्री के अधिकारों को ध्यान में रखते हैं संपत्ति विभाजन के समय पत्नी या माता का पुत्र के समान अंश भाइयों के अंश के चतुर्थांश आदि को अपरार्क स्त्री धन के रूप में स्वीकार करते हैं। मनु कहते हैं कि पुत्र पिता की आत्मा है पुत्री भी उसी की दुहिता है उसके रहते दूसरा संपत्ति नहीं ले सकता। मनु पुत्री को भी मृतक पिता की संपत्ति का अधिकारी मानते हैं दूसरों को नहीं। दूसरे अर्थों में यह कहा जा सकता है कि मनु यह स्वीकार करते हैं कि संपत्ति विभाजन में पुत्री का उतना ही अधिकार है जितना कि पुत्र का। मनु पति के मरने के बाद नारी को स्त्री धन से वंचित न करने का आदेश देते हैं।

उद्देश्य

1. संस्कृत साहित्य में नारी की स्थिति, अधिकारों और गरिमा के विभिन्न आयामों का विश्लेषण करना।
2. आधुनिक नारीवादी चिंतन में स्त्री की स्वायत्तता, समानता और न्याय की अवधारणाओं का अध्ययन करना तथा उनकी तुलना संस्कृत साहित्य के दृष्टिकोण से करना।

भारतीय पौराणिक कथाओं में महिलाएँ

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति लगातार परिवर्तित होती रही है। धर्म में, उनकी स्थिति में ये उतार-चढ़ाव और भी अधिक स्पष्ट रहे हैं क्योंकि इतिहासकार वेंडी डोनिगर ने बताया है, कि महिला लिंग को दुनिया के किसी भी धर्म या उनके पुजारियों और पैगम्बरों का कभी भी समर्थन नहीं मिला है व हिंदू धर्म इसका अपवाद नहीं है और जैसे-जैसे हम प्राचीन काल के समाज से प्रारंभिक मध्यकालीन समय की ओर बढ़ते हैं, परिवार और भारतीय समाज में महिलाओं को मिलने वाली स्वतंत्रता की डिग्री में गिरावट लगातार तेज होती जाती है। हालाँकि इतिहास में उस समय के सटीक बिंदु को निर्दिष्ट करना मुश्किल है जहाँ यह गिरावट शुरू हुई। प्राचीन भारतीय समाज की तीन व्यापक अवधियों को समाज में महिलाओं की बदलती स्थिति और भूमिका का सर्वेक्षण करने के लिए एक दूसरे के खिलाफ रखा जा सकता है। इनमें से पहला है प्रारंभिक वैदिक काल (1500–1000 ईसा पूर्व), ऋग्वेद की रचना का काल, जो हिंदू धर्म और समाज की आधारशिला होने के अलावा महिलाओं की स्थिति का अध्ययन करने का पहला साहित्यिक स्रोत भी है। हालाँकि इस समय में महिलाएँ कभी भी अपने ऊपर पितृसत्तात्मक अधिकार से स्वतंत्र नहीं थीं, फिर भी, वे अपने पतियों के साथ संपत्ति की संयुक्त मालिक थीं और द्विपादों (दासों) और चौपायों (मवेशियों) पर शासन करती थीं घरेलू अर्थव्यवस्था और समाज दोनों में उनकी उपस्थिति को महत्वपूर्ण माना जाता था और उन पर पितृसत्तात्मक नियंत्रण के बावजूद शुद्धता को कोई विशेष मूल्य

नहीं दिया गया था। इस समय महिलाओं को शिक्षा भी प्रदान की जाती थी। कई उच्च वर्ग की महिलाएँ उच्च शिक्षित थीं और बौद्धिक और दार्शनिक प्रवचनां में सक्रिय रूप से भाग लेती थीं। घोषा, अपाला, लोपामद्रा, मैत्रेयी, गार्गी, इंद्राणी, मुदगालिनी और विश्ववारा जैसी वैदिक भजनों की ब्रह्मवादिनी या महिला रचनाकारों के संदर्भ पूरे साहित्य में बिखरे हुए हैं साहित्यिक गतिविधियों और घरेलू अर्थव्यवस्था के अलावा अन्य कैरियर विकल्प भी महिलाओं के लिए खुले हुए प्रतीत होते हैं।

रामायण में महिलाएँ

दो महान भारतीय महाकाव्यों (रामायण और महाभारत) को सामूहिक रूप से इतिहास कहा जाता है, में से रामायण को पौराणिक मान्यताओं के अनुसार सबसे पहले घटित माना जाता है, भले ही साहित्य में मौजूद साक्ष्य इसके विपरीत संकेत देते हैं। नतीजतन, यहाँ सबसे पहले इसका अध्ययन किया जाता है। हालाँकि वाल्मीकि की रामायण (लगभग दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व— में रचित) को भारत में शिक्षित लोगों के बीच सामान्य संस्करण माना जाता है, लेकिन इस महाकाव्य के कई संस्करण हैं जो न केवल हिंदू धर्म में बल्कि जैन और बौद्ध परंपराओं में भी हैं। संस्करण एक भौगोलिक स्थान से दूसरे स्थान पर भी बदलते हैं, जिसे पारंपरिक रूप से स्थल रामायण कहा जाता है हालाँकि, भिन्नताओं के बावजूद, कहानी में मुख्य महिला पात्र वही रहती हैं। इस शोधपत्र के उद्देश्य से, यहाँ उनका अध्ययन नायक राम के जीवन के तीन महत्वपूर्ण चरणों के संबंध में किया गया है। हालाँकि, यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि सुविधा के उद्देश्य से इस विश्लेषण के लिए सभी महिला पात्रों का अध्ययन नहीं किया गया क्योंकि ऐसा करना विशेष रूप से विषय पर एक अलग शोध का हिस्सा हो सकता है।

पौराणिक साहित्य का महत्व

पौराणिक साहित्य का अर्थ है प्राचीन कथाओं का विशद वर्णन। भारतीय जन मानस और विश्व जनमानस पर पौराणिक साहित्य और चरित्रों का बहुत गहन प्रभाव परिलक्षित होता है। पुराण विश्व साहित्य के प्राचीनतम ग्रंथ हैं। पुराणों में लिखित ज्ञान और नैतिकता की बातें आज भी प्रासंगिक, अमूल्य तथा मानव सभ्यता की आधारशिला हैं। पुराणों से पहले वेदों ने भारतीय जनमानस को विश्वगुरु बनाया था। वेदों की भाषा तथा शैली कठिन है। इस कारण पुराणों का सृजन हुआ पुराण उसी ज्ञान के सहज तथा रोचक संस्करण हैं। उनमें जटिल तथ्यों को कथाओं के माध्यम से समझाया गया है। पुराणों का विषय नैतिकता, विचार, भूगोल, खगोल, राजनीति, संस्कृति, सामाजिक परम्परायें, विज्ञान तथा अन्य विषय हैं। विशेष तथ्य यह है कि पुराणों में देवी-देवताओं, राजा, महाराजाओं और ऋषि-मुनियों के साथ-साथ जन साधारण की कथाओं को भी वर्णित किया गया है जिनमें पौराणिक काल के सभी पहलुओं का चित्रण मिलता है।

वैदिक धर्म में महिला

एक विशिष्ट प्रकार के रोल मॉडल की संभावना है जिसे हम पूरक मॉडल के रूप में नाम दे सकते हैं, जहां पुरुष और महिला दोनों समकक्ष, दोनों देवता और देवी, एक दूसरे के पूरक बने रहते हैं। इस मॉडल को आमतौर पर महिला के लिए सहधर्मिणी मॉडल के रूप में वर्णित किया जाता है। एक देवी में एक संभावित रोल मॉडल की जांच करते समय जिसे एक साधारण परिवार से जुड़ी लड़की अपने जीवन में भी अनुकरण करने की उम्मीद करती है, वह इस तरह के सहधर्मिणी मॉडल की उम्मीद कर सकती है। पुरुष और महिला देवी एक दूसरे के समकक्ष हैं जो मानव जीवन को चित्रित करेंगे और यह भी दर्शाया गया है कि कैसे पति और पत्नी वास्तविक जीवन में एक दूसरे के आदर्श के समकक्ष हैं। समय के साथ, आदर्श तब कमजोर हो जाता है जब दो समकक्षों, भगवान और देवी, पति और पत्नी के बीच दोस्ती और रचनात्मक संवाद कमजोर हो जाता है जब एक समकक्ष दूसरे पर हावी हो जाता है। आदर्श रूप से, भारत में महिलाओं और समाज में उनकी भूमिका के लिए सम्मान है, जैसा कि प्राचीन हिंदू शास्त्रों में वर्णित है। एक दिलचस्प विशेषता यह है कि प्राचीन भारत में, प्रारंभिक वैदिक काल में महिलाएं कई पति रख सकती थीं, विधवाएं पुनर्विवाह कर सकती थीं, और जहां असंगति या मनमुटाव था, वहां तलाक की अनुमति थी। मानव जाति में उच्च आदर्शों को स्थापित करने के लिए, भारतीय पूर्वजों ने देवियों का एक समूह बनाया, जिन्हें अपने पतियों के बराबर दर्जा प्राप्त था।

महर्षि दयानन्द का साहित्य

स्वामी दयानंद सरस्वती गुजराती भाषी थे। उनके पिता वेदज्ञ थे। छोटी उम्र में ही मूलशंकर (स्वामीजी का बचपन का नाम) को वेद कंठस्थ थे। परम तपस्वी दंडी स्वामी विरजानंद जी के यहां मथुरा में 1860 से 1863 तक रह कर उन्होंने वेदों और पाणिनी के अष्टाध्यायी का गहन अध्ययन किया था। कलकत्ता में उनकी भेंट बंगाली भाषी केशवचंद्र सेन से हुई और उनकी प्रेरणा से स्वामी जी ने अपने लेखन और भाषण की भाषा हिंदी बना ली। उन्होंने इसे आर्यभाषा कहा और माना कि आर्यावर्त के प्रत्येक व्यक्ति को आर्यभाषा का ज्ञान होना चाहिए। देश की अखंडता के लिए उन्होंने गुजराती, संस्कृत और आर्यभाषा में से आर्यभाषा को वरीयता दी। गुरु विरजानंद का आदेश पाकर स्वामी जी स्वभाषा, स्वदेश, स्वराज्य, स्वसंस्कृति, स्ववेश, स्वदेशोन्नति का अलख जगाने निकल पड़े। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने 1875 में मुम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की। आर्य का अर्थ है श्रेष्ठ और प्रगतिशील और इस प्रकार आर्यसमाज का अर्थ हुआ श्रेष्ठ और प्रगतिशील लोगों का समाज। मुम्बई से दिल्ली और फिर पंजाब पहुंचे। पंजाब में उनके विचारों का भव्य स्वागत हुआ। यहां आर्यसमाज की अनेक शाखाएं खुली और यह प्रांत आर्यसमाज का गढ़ बन गया।

हिंदी साहित्य के विकास में हंस के आत्मकथांक का विशिष्ट योगदान रहा है। सन् 1932 में प्रकाशित इस अंक में जयशंकर प्रसाद, वैद्य हरिदास, विनोदशंकर व्यास, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, दयाराम निगम, मौलवी महेशप्रसाद, गोपालराम गहमरी, सुदर्शन, शिवपूजन

सहाय, रायकृष्णदास, श्रीराम शर्मा आदि साहित्यकारों और गैर-साहित्यकारों के जीवन के कुछ अंशों को प्रेमचंद ने स्थान दिया है।

इस काल की सबसे महत्वपूर्ण आत्मकथा श्यामसुंदर दास कृत मेरी आत्मकहानी (सन् 1941) है। इसमें लेखक ने अपने जीवन की निजी घटनाओं को कम स्थान दिया है। इसकी बजाय काशी के इतिहास और समकालीन साहित्यिक गतिविधियों को भरपूर स्थान मिला है। लगभग इसी समय बाबू गुलाबराय की आत्मकथा मेरी असफलताएँ प्रकाशित हुई। इस आत्मकथा में लेखक ने व्यंग्यपूर्ण रोचक शैली में अपने जीवन की असफलताओं का सजीव चित्रण किया है।

वेद पुराण

वेद और पुराण भारतीय धर्म, संस्कृति और इतिहास के दो प्रमुख स्रोत माने जाते हैं। वेद, जिन्हें श्रुति कहा जाता है, का अर्थ होता है सुना हुआ ज्ञान। ये चार प्रकार के होते हैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। वेदों का संकलन हजारों वर्षों तक मौखिक रूप से होता रहा, और इन्हें ऋषियों द्वारा ध्यान और तपस्या के माध्यम से प्राप्त किया गया था। वेद मुख्यतः यज्ञ, उपासना और कर्मकांड से संबंधित हैं, लेकिन इनमें आध्यात्मिक ज्ञान और ब्रह्मज्ञान के भी गहरे पहलू छिपे हुए हैं। ऋग्वेद में देवताओं की स्तुतियों का वर्णन है, यजुर्वेद में यज्ञ संबंधी विधियों का, सामवेद में संगीत और मंत्रों का और अथर्ववेद में तंत्र-मंत्र और औषधीय ज्ञान का उल्लेख है।

वहीं, पुराणों को स्मृति माना जाता है, जिसका अर्थ है स्मरण किया हुआ या लिखित ज्ञान। पुराणों की रचना मुख्यतः वेदों के ज्ञान को साधारण लोगों तक पहुँचाने के लिए हुई थी, क्योंकि वेदों का अध्ययन और उनका सही अर्थ निकालना जटिल था। पुराणों में पौराणिक कथाएँ, देवताओं की महिमा, सृष्टि की उत्पत्ति और विनाश, राजाओं की वंशावली, नैतिक और धार्मिक उपदेश, और सामाजिक व्यवस्थाओं का विवरण दिया गया है। 18 प्रमुख पुराण माने जाते हैं, जिनमें विष्णु पुराण, शिव पुराण, भागवत पुराण, ब्रह्मा पुराण, और देवी भागवत पुराण प्रमुख हैं। इन पुराणों में हिंदू धर्म के विभिन्न देवी-देवताओं की कथाओं और उनके द्वारा की गई लीलाओं का वर्णन मिलता है, जो भक्ति और धार्मिकता का संदेश देते हैं।

वेदों और पुराणों के बीच एक मुख्य अंतर यह है कि वेद मुख्यतः यज्ञ और कर्मकांड से संबंधित हैं और उनमें ब्रह्म (अविनाशी आत्मा) के बारे में अधिक चर्चा होती है जबकि पुराण सरल और रोचक कहानियों के माध्यम से धर्म और नीति के पाठ सिखाते हैं। पुराणों में सृष्टि की उत्पत्ति, ब्रह्मांड के विभिन्न चरणों, मन्वन्तर, और युगों का वर्णन मिलता है, जो समय और काल के विशाल चक्र का प्रतीक हैं। इसके अलावा, पुराणों में धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष — इन चार पुरुषार्थों पर भी विशेष जोर दिया गया है, जो जीवन के चार मुख्य उद्देश्य माने जाते हैं।

इस प्रकार, वेद और पुराण दोनों ही भारतीय धार्मिक और सांस्कृतिक धरोहर के अनमोल रत्न हैं, जो न केवल धर्म और आध्यात्मिकता के मार्गदर्शक हैं, बल्कि नैतिकता, आचार—विचार, और जीवन जीने की कला भी सिखाते हैं। वेद जहाँ परम सत्य और ब्रह्मज्ञान का मार्ग दिखाते हैं, वहीं पुराण मानव जीवन की विभिन्न स्थितियों में सही आचरण और भक्ति का मार्ग प्रस्तुत करते हैं।

महाकाव्यों में वर्णित नारियों की भूमिका

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ॥

रघुवंश महाकाव्य के प्रथम सर्ग के इस श्लोक में उद्धृत उपर्युक्त पंक्तियाँ समाज में स्त्री व पुरुष की समानता का परिचायक हैं। भारतीय संस्कृति अर्धनारीश्वर की परम्परा से ओतप्रोत है अर्थात् समाज में महिला एवं पुरुष का समान स्थान होना चाहिए। 'नारी' समाज के मूल स्तम्भ का अर्धभाग है। यह वह शब्द है, जिसे सुनकर स्त्री के अनेक रूप दृष्टिपटल पर दृश्यमान होने लगते हैं। वह माँ है, भगिनी है, सुता है एवं अर्धांगिनी है। वह किसी भी रूप में हो किन्तु अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन में कदापि पश्चगामी नहीं होती। एवमेव नारी को 'शक्ति' रूप माना गया है। 'मनुस्मृति' में कहा गया है— 'यत्रनार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।' अर्थात् जहाँ नारी पूजनीया है, वहाँ देवता का निवास है, यहाँ 'पूजनीया' का अर्थ सम्मान देने से है। आज के समाज में नारी को एक सशक्त स्थान प्राप्त है, वह किसी भी रूप में पुरुषों से कम नहीं है, जिसके अनेकों उदाहरण हमारे सामने उपस्थित हैं इंदिरा गांधी, अरुंधती राय, सुनीता विलियम्स, किरण बेदी, चंदा कोचर, मैरी कॉम, एकता कपूर, सुनीता नारायण, मेधा पाटेकर, प्रतिभा पाटिल, ज्योत्सना सूरी, पी0वी0 सिंधू, पी0टी0 उषा, महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि भारत की प्रमुख सफल महिलाएं हैं। सफल महिला की सूची में संख्या की अधिकता के कारण सबका नाम उद्धृत करना सम्भव नहीं है।

आज महिला सशक्त है, वह देवी स्वरूपा है, इस बात से हम सभी सहमत हैं। किन्तु जिस प्रकार एक सिक्के के दो पहलू होते हैं, उसी प्रकार हमारे समाज में स्त्रियों की दशा है। इसी समाज में स्त्री का पर्याप्त शोषण भी किया जाता है। वर्तमान काल से लेकर प्राचीन काल तक के समय पर दृष्टिपात करने से हमें नारी के सम्मान व अपमान के दोनों ही रूप दिखाई देते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि भले ही हमारी संस्कृति में प्राचीन काल में स्त्रियों की दशा बहुत उत्तम रही हो तथापि उनके शोषण में भी कोई कमी नहीं थी।

साहित्य समाज का दर्पण माना जाता है। साहित्य के अध्ययन से हमें तत्कालीन समाज की स्थिति के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है। साहित्य का बहुत ही विशाल भाग महाकाव्यों से भरा पड़ा है। प्राचीन महाकाव्यों में संस्कृत व हिन्दी के महाकाव्यों के अध्ययन से समाज के

विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। संस्कृत महाकाव्यों में प्रमुख हैं— रामायण, महाभारत, कुमारसम्भव, रघुवंश, बुद्धचरित, नैषधीयचरितम्, किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवधम् आदि।

हिन्दी महाकाव्यों में प्रमुख हैं— साकेत, पद्मावत, रामचरितमानस, उर्वशी, प्रियप्रवास आदि। आज इस शोध पत्र के माध्यम से हम कुछ प्रमुख महाकाव्यों में वर्णित नारी की स्थिति पर प्रकाश डालने का लघु प्रयास करेंगे।

रामायण :

रामायण लौकिक संस्कृत का आदिकाव्य एवं हिन्दू धर्म का धार्मिक ग्रंथ माना जाता है। इस महाकाव्य में जीवन के उत्तम आदर्शों को प्रस्तुत किया गया है। आज भी हमारा समाज राम राज्य की कल्पना करता है। किन्तु आदर्शों से भरे इस समाज में भी नारी की स्थिति शोचनीय ही थी, जिसका सर्वप्रमुख उदाहरण 'सीता' है। अनक परोक्षाओं से गुजरने के बाद भी लोकमर्यादा के कारण अपनी गर्भवती स्त्री को जंगल में छोड़ देना कहाँ का न्याय है? क्या राजा राम को अपने नगरवासियों के प्रति आदर्श प्रस्तुत करना इतना अनिवार्य था कि उन्हें अपने उत्तरदायित्वों का भी ध्यान नहीं रहा? क्या एक पति का अपनी गर्भवती पत्नी के प्रति कोई कर्तव्य नहीं होता? उन्होंने यह कृत्य करके जीवन पर्यन्त के लिए कलंक ले लिया कि वे अच्छे पति नहीं थे। उन्होंने अपने पति धर्म का पालन कदापि नहीं किया, न ही अपनी पत्नी पर विश्वास किया, न ही गर्भकाल में उसे उचित सुविधा प्रदान की।

'अहल्या' जिसे गौतम ऋषि की पत्नी माना जाता है, उन्होंने सिर्फ इसलिए अहल्या को पत्थर की शिला में बदल दिया क्योंकि इन्द्र ने छद्मवेश में उनकी अनुपस्थिति में उनकी कुटिया में प्रवेश किया, जिसे कुटिया से बाहर निकलते हुए गौतम ऋषि ने देख लिया। उन्होंने यह जानने का प्रयास नहीं किया कि आखिर वास्तविकता क्या है? यह नारी का शोषण ही तो है।

'सीता' अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न नारी थी। लंका में सीता को पहचानकर उनकी प्रशंसा करते हुए हनुमान जी ने कहा—

दुष्करं कृतवान् रामो हीनो यदनया प्रभुः।

धारयत्यात्मनो देहं न शोकेनावसीदति॥

यदि रामः समुद्रान्तां मेदिनीं परिवर्तयेत्।

अस्याः कृते जगच्चापि युक्तमित्येव मे मतिः॥

(वाल्मीकि रामायण सुन्दरकाण्ड)

सुन्दरकाण्ड में सीता को 'रामा' के नाम से भी अभिहित किया गया है— 'विरराम रामा' अर्थात् अन्य दृष्टि से सीता, राम का ही रूप है, वह राम की अनन्य हृदया एवं प्रेयसी पत्नी है, जिसके लिए उन्होंने समुद्र पार करके रावण से युद्ध कर उसे पराजित किया एवं सीता को सम्मान सहित अयोध्या वापस लेकर आए अर्थात् राम राज्य में नारी सम्मान बहुत महत्वपूर्ण था।

काव्यं रामायणं कृत्स्नं सोतायाश्चतितं महत्।

(वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड)

एक अन्य प्रसंग में 'कैकेयी' के चरित्र को उत्तम बताते हुए राम भरत से कहते हैं कि माता कैकेयी का पिता दशरथ से विवाह इसी शर्त पर हुआ था कि राज्य उनके पुत्र को मिले—

पुरा भ्रातः पिता नः स मातरं ते समुद्वहन्।

मातामहे समाश्रौषीद्राज्यशुल्कमनुत्तमम्॥

(वाल्मीकि रामायण अयोध्याकाण्ड)

कैकेयी वीरवती स्त्री के रूप में स्थापित है, वह राजा दशरथ के साथ न केवल युद्धभूमि में जाती है बल्कि अपने शौर्य का परिचय भी देती है। इसके अतिरिक्त रामायण में कौशल्या, सुमित्रा, अनुसूया, शबरी, स्वयं प्रभा, तारा, मन्दोदरी, त्रिजटा, शूर्पनखा आदि अनेक स्त्री पात्रों का चरित्र—चित्रण किया गया है।

महाभारत :

महाभारत महाकाव्य में महर्षि वेदव्यास जी ने कहा है— 'ये स्त्रियाँ लक्ष्मी हैं, ऐश्वर्य की कामना करने वालों को इनका सत्कार करना चाहिए। वश में रखकर पालन पोषण की गई स्त्री लक्ष्मी ही होती है।' तात्पर्य यह है कि यदि स्त्री वश में है तो लक्ष्मी नहीं तो....? 'ये धर्मग्रन्थों में पुरुष को परमात्मा माना गया है। स्त्री यदि अन्य पुरुष की कल्पना भी कर ले तो वह पापिन मानी जाती है। हमारे धर्मग्रन्थों में न केवल गलत कहा ही गया है बल्कि उनके साथ गलत व्यवहार भी किया गया है। जिसके कुछ उदाहरण निम्न हैं—

महाभारत में पाँच भाइयों का विवाह एक ही स्त्री से होना इस बात को सिद्ध करता है कि तत्कालीन समाज में नारी भोग्या थी।

युधिष्ठिर द्वारा अपनी पत्नी को दाँव पर लगाना अर्थात् नारी भावनाओं से मुक्त एक वस्तु मात्र है।

शकुंतला के जन्म लेते ही उसकी माँ के द्वारा उसका परित्याग करना।

गर्भवती शकुन्तला को न पहचान कर राजा दुष्यन्त के द्वारा उसे छोड़ देना।

पति के नेत्रहीन होने पर गांधारी के आजीवन नेत्र पर पट्टी बाँधना।

भरी सभा में द्रौपदी का निर्दयतापूर्वक अपमान करना।

इसके अतिरिक्त अनेक उदाहरण महाभारत में प्राप्त होते हैं, जो नारी के अस्तित्व के लिए अत्यन्त घातक हैं।

महाभारत के अनुशासन पर्व में कहा गया है—

जो पति की देवता क समान सेवा या परिचर्या करती है, पति के अतिरिक्त किसी से हार्दिक प्रेम नहीं करती, कभी नाराज नहीं होती तथा उत्तम व्रत का पालन करती है, जिसका दर्शन पति को सुखद जान पड़ता है, जो पुत्र के मुख की भाँति स्वामी के मुख को सदा निहारती रहती है तथा जो साध्वी ह एवं नियमित आहार का सेवन करने वाली है, वह स्त्री धर्मचारिणी कही गई हैं। अर्थात् महाभारत काल में स्त्री पूर्णतः पुरुष पर आश्रित थी। उसका स्वयं का कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था।

संस्कृत साहित्य में नारी

संस्कृत साहित्य की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। साक्षी है कि भारतीय समाज में नारी का स्थान अत्यंत गौरवपूर्ण रहा है। भारत का मध्यकालीन और वर्तमान समाज नारी की स्थिति को लेकर अनेक प्रश्नों से घिरा है। आधुनिक संस्कृत साहित्य ने नारी के किस स्वरूप की अभिव्यक्ति की है,

नारि ! त्वं मानवी देवता माता मानव निर्माणी

नारी जीवन की सर्जनात्मक शक्ति है, यह कथन सर्वत्र सभी साहित्यों में एक स्वर से स्वीकार किया गया है। यह प्राचीन काल से ही काव्य का विषय रही है। साहित्य जगत ने प्राचीन एवं आधुनिक परिस्थितियों में नारी से सम्बन्धित दृष्टिकोण को समय-समय पर भिन्न-भिन्न रूप में परिमार्जित किया है। भारतीय चिंतन में नारी का विशेष स्थान रहा है। वह भारतीय समाज में पुरुषों से आगे रही है। राम, कृष्ण, शिव के नामों के पूर्व सीता, राधा, उमा स्वयं इसके प्रमाण हैं। कभी वह माँ स्वरूपा है तो कभी दुष्टों व आततायियों का नाश करने के लिये काली कराली का रूप धारण करती है। यदि वह दासी रूप में पति की सेवा में अपना जीवन अर्पण कर सकती है तो शासिका बन कर राज्य भी कर सकती है। तात्पर्य यह है कि नारी में असीमित शक्ति, साहस प्रेम दया आदि अनेक मानवीय गुण विद्यमान हैं जो उसे सर्वप्रतिष्ठित कर देते हैं। ऋग्वेद में वह वाक् देवी के रूप में स्वयं उद्घोष करती है—शअहंराष्ट्रीश मै स्वामिनी हूँ। मैं जिसे चाहती हूँ उसे ब्रह्मर्षि, विद्वान बना देती हूँ। आधुनिक संस्कृत वाङ्मय में भी नारी के सर्वांगीण विकास को चित्रित किया गया है। नारी प्रबुद्ध,

प्रगतिशील, वीर, उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर अपने सामर्थ्य, शक्ति व बुद्धि से आगे बढ़ती हुई चतुर्दिक विजय-पताका फहरा रही है। वह अपने सर्वांगीण विकास के लिये, विश्व की मंगल कामना के लिए और समानुरूप आत्म-परीक्षण के लिये समाज और सम्पूर्ण विश्व को प्रेरित कर रही है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर, प्राचीन संस्कृत साहित्य ऐतिहासिक संदर्भों में महिलाओं की भूमिका, उसके अधिकारों और सामाजिक अपेक्षाओं के बारे में बहुमूल्य जानकारी प्रदान करता है। ऋग्वेद, महाभारत, रामायण और विभिन्न धर्मशास्त्रों जैसे ग्रंथों में महिलाओं का सूक्ष्म चित्रण मिलता है जिसमें पूजनीय देवियों और ऋषियों से लेकर पितृसत्तात्मक मानदंडों के अधीन रहने वाली आकृतियाँ शामिल हैं। जहाँ ये ग्रंथ महिलाओं के जीवन के सशक्त और प्रतिबंधात्मक दोनों पहलुओं को प्रकट करते हैं, वहीं वे आध्यात्मिक, बौद्धिक और सामाजिक क्षेत्रों में महिलाओं की एजेंसी की मान्यता पर भी प्रकाश डालते हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में, प्राचीन संस्कृत साहित्य में महिलाओं के अधिकारों की खोज महत्वपूर्ण प्रासंगिकता रखती है। यह लैंगिक भूमिकाओं के विकास और समय के साथ सामाजिक मानदंडों में बदलाव को समझने का आधार प्रदान करता है। प्राचीन ग्रंथों में महिलाओं की एजेंसी की मान्यता समकालीन लैंगिक समानता आंदोलनों के लिए प्रेरणा का काम कर सकती है।

संदर्भ—

1. पन्त, सुबोध चन्द्र 1979: “झाँसीश्वरी चरितम्” गंगानाथ झाँ केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद, संस्करण, सर्ग 1, श्लोक 27।
2. मिश्र, प्रो० राजेन्द्र 1986: “इक्षुगन्धा कथा संग्रह” बैजयन्त प्रकाशन इलाहाबाद, पृष्ठ 72।
3. मिश्र, प्रो० राजेन्द्र 1986: “इक्षुगन्धा कथा संग्रह में प्रकाशित कहानी शतपर्विका” बैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. मिश्र, राजेन्द्र 1988: “जानकी जीवनम्” बैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद, सर्ग 1, श्लोक 72।
5. मिश्र, रामावतार 1982: “श्री देवी चरितम्” रुक्मिणी प्रकाशन, इन्द्रपुरी राँची, संस्करण सर्ग 1, श्लोक 58।
6. मिश्र, रामचन्द्र 1985: “वैदेही चरितम्”, कामेश्वर सिंह संस्कृत विश्वविद्यालय दरभंगा, बिहार, संस्करण सर्ग 8, श्लोक 43।

7. द्विवेदी, प्रो० रेवा प्रसाद 1960: “सीता चरितम्” संस्कृत परिषद, डॉ० हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, संस्करण सर्ग 3, श्लोक 31।
8. द्विवेदी, प्रो० रेवा प्रसाद 1960: “सीता चरितम्” संस्कृत परिषद, डॉ० हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, संस्करण सर्ग 3 श्लोक 46।
9. बिस्वाल, बनमाली “प्रियतमा” दृग् भारती त्रैमासिक इलाहाबाद।
10. बिस्वाल, बनमाली “ऋतुपर्णा” दृग् भारती, त्रैमासिक इलाहाबाद।
11. महर्षि वाल्मीकि – रामायण।
12. महाकवि कालिदास – रघुवंशम्।
13. सिंह, इन्द्रमोहन 1988: “हिरण्यरश्मि”— दीप प्रकाशन, पटियाला।